

रविदासिया सम्प्रदाय का दार्शनिक अध्ययन

राकेश कुमारी, हिंदी विभाग, आई.ई.सी. विश्वविद्यालय, बड़ी, हिमाचल प्रदेश

Email : rakeshkumari10221@gmail.com

सारांश

यह शोध-पत्र रविदासिया सम्प्रदाय की दार्शनिक विचारधारा का एक गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है, जो संत रविदास की शिक्षाओं पर आधारित है। संत रविदास 15वीं शताब्दी के एक महान संत, कवि और समाज-सुधारक थे, जिन्होंने भक्ति को जीवन की मुक्ति का मार्ग माना। उन्होंने जातिवाद, छुआछूत और सामाजिक भेदभाव का खुला विरोध करते हुए एक ऐसे धार्मिक दृष्टिकोण की स्थापना की, जिसमें मानव समानता, भक्ति और आध्यात्मिक चेतना को केंद्रीय स्थान प्राप्त है। उनकी शिक्षाओं के अनुयायियों ने जो परंपरा विकसित की, वह कालांतर में रविदासिया सम्प्रदाय के रूप में सामने आई।

रविदासिया सम्प्रदाय का दर्शन मुख्यतः आत्मा और परमात्मा की एकता, सच्ची भक्ति, करुणा, अहिंसा और समता पर आधारित है। यह धर्म भक्ति मार्ग को निराकार ईश्वर की प्राप्ति का साधन मानता है, जो कर्मकांड, जाति और बाह्य आडंबरों से ऊपर उठता है। संत रविदास की वाणी में आध्यात्मिकता और सामाजिक न्याय दोनों का सम्मिलन देखने को मिलता है, जो इसे एक विशिष्ट धार्मिक-दार्शनिक परंपरा बनाता है। विशेष रूप से, “मन चंगा तो कठौती में गंगा” जैसी उक्तियाँ उनके विचारों की सहजता और गहराई को दर्शाती हैं।

इस शोध में रविदासिया सम्प्रदाय के ऐतिहासिक विकास, ग्रंथों, पूजा-पद्धति और सामुदायिक पहचान पर भी विचार किया गया है। 21वीं सदी में रविदासिया सम्प्रदाय न केवल एक धार्मिक समूह के रूप में बल्कि दलित समुदाय के आत्म-सम्मान और सांस्कृतिक पुनरुद्धार का माध्यम भी बन चुका है। यह अध्ययन यह निष्कर्ष निकालता है कि रविदासिया सम्प्रदाय का दर्शन केवल आध्यात्मिक मुक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय और समानता का भी एक वैचारिक उपकरण है। अतः इसका दार्शनिक अध्ययन न केवल धार्मिक विमर्श को समृद्ध करता है, बल्कि सामाजिक विमर्श में भी नया दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

संकेत शब्द : रविदासिया धर्म, संत रविदास, भक्ति आंदोलन, सामाजिक न्याय, आत्मा, ईश्वर, दर्शन

1. भूमिका

भारत की धार्मिक और सामाजिक परंपराओं में मध्ययुगीन भक्ति आंदोलन का विशेष महत्व रहा है। यह आंदोलन एक ऐसा सामाजिक-धार्मिक पुनर्जागरण था जिसने प्रचलित जाति प्रथा, कर्मकांड, और ब्राह्मणवादी वर्चस्व को चुनौती दी। इस आंदोलन ने ईश्वर की प्राप्ति के लिए जन्म, जाति, लिंग, और सामाजिक वर्ग के बंधनों को अस्वीकार करते हुए एक लोकतांत्रिक आध्यात्मिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया (Lorenzen, 1995)। इस आंदोलन

में संत कबीर, मीरा, नामदेव, और रविदास जैसे संतों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इनमें से संत रविदास न केवल एक आध्यात्मिक गुरु थे बल्कि एक सामाजिक विचारक भी थे, जिनकी शिक्षाओं पर आधारित रविदासिया सम्प्रदाय का उदय हुआ।

संत रविदास का जीवन और विचारधारा भारतीय समाज में व्याप्त गहरी सामाजिक असमानता और जातिगत भेदभाव के विरुद्ध एक क्रांतिकारी आवाज़ थी। उनका जन्म 15वीं सदी के पूर्वार्ध में काशी (वर्तमान वाराणसी) में एक चर्मकार (दलित) परिवार में हुआ था, जो सामाजिक व्यवस्था में सबसे निचली श्रेणी मानी जाती थी (Zelliot, 2005)। उन्होंने समाज में व्याप्त अस्पृश्यता, वर्ण व्यवस्था, और धार्मिक अंधविश्वासों का विरोध करते हुए भक्ति को मुक्ति का मार्ग बताया। रविदास ने कहा कि ईश्वर के निकट पहुंचने के लिए किसी विशेष जाति या वर्ग का होना आवश्यक नहीं है, बल्कि सच्ची भक्ति और सदाचार ही आवश्यक हैं (Hawley & Juergensmeyer, 1988)। उनके ये विचार एक ऐसे धार्मिक और दार्शनिक आंदोलन की आधारशिला बने जो आगे चलकर रविदासिया सम्प्रदाय के रूप में संगठित हुआ।

रविदासिया धर्म, संत रविदास की शिक्षाओं पर आधारित एक स्वतंत्र धार्मिक परंपरा है, जिसकी जड़ें भक्ति आंदोलन में हैं और जो विशेषतः अनुसूचित जातियों में लोकप्रिय हुई। यह धर्म विशेषतः पंजाब, उत्तर प्रदेश, और प्रवासी भारतीय समुदायों — जैसे ब्रिटेन, कनाडा, और अमेरिका — में प्रचलित है। 2010 में रविदासिया समुदाय ने एक स्वतंत्र धार्मिक पहचान की घोषणा की, जिसमें उन्होंने *अमर ग्रंथ* को अपना मुख्य धार्मिक ग्रंथ स्वीकार किया, जो संत रविदास की रचनाओं पर आधारित है (Ram, 2010)। इससे यह स्पष्ट होता है कि यह धर्म अब केवल आध्यात्मिक आस्था नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और सामाजिक पहचान भी बन चुका है।

रविदासिया सम्प्रदाय का दार्शनिक आधार विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भारतीय दार्शनिक परंपरा की कई धाराओं — जैसे अद्वैतवाद, निर्गुण भक्ति, और कर्म सिद्धांत — से संवाद करता है। संत रविदास की वाणी में आत्मा और परमात्मा की एकता की बात की गई है, जो उपनिषदों के अद्वैतवादी दृष्टिकोण के निकट है, लेकिन उसमें एक सामाजिक आयाम भी निहित है (Singh, 2011)। उनके अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति के भीतर ईश्वर का अंश विद्यमान है, और वह ईश्वर जाति, धर्म, या वर्ग से परे है। उन्होंने लिखा:

"मन चंगा तो कठौती में गंगा" — संत रविदास

यह कथन आत्मिक पवित्रता की उस धारणा को दर्शाता है जो किसी बाह्य स्थान या कर्मकांड की अपेक्षा आंतरिक शुद्धता को प्राथमिकता देता है। इस प्रकार, रविदासिया दर्शन केवल आत्मा और परमात्मा के बीच संबंध की बात नहीं करता, बल्कि समाज में व्याप्त अन्याय, भेदभाव, और विषमता के विरुद्ध एक गहन दार्शनिक प्रतिक्रिया भी है। भक्ति आंदोलन में रविदास का दृष्टिकोण कबीर से मेल खाता है, लेकिन रविदास का जोर सामाजिक न्याय और समानता पर कुछ अधिक स्पष्ट है। उन्होंने अपने पदों में दलित अनुभव को सीधे शब्दों में प्रकट किया और यह दिखाया कि धार्मिक अनुभव केवल ब्राह्मणों या उच्च जातियों की बपौती नहीं है (Vaudeville, 1974)। उन्होंने स्वर्ग की ऐसी कल्पना की जिसमें कोई भेदभाव नहीं है — *बेगमपुरा* — एक ऐसा शहर जहां कोई दुख, कर, या विषमता नहीं है। यह एक प्रकार का सामाजिक-दार्शनिक आदर्श है जो आधुनिक सामाजिक समानता की

अवधारणाओं के निकट है (Juergensmeyer, 1988)। इस प्रकार, रविदासिया सम्प्रदाय एक सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति का प्रतीक बनता है, जो दार्शनिक रूप से भी एक गहरा आधार रखता है।

रविदास की भक्ति केवल व्यक्तिगत मुक्ति का मार्ग नहीं थी, बल्कि उसमें समाज के व्यापक परिवर्तन की आकांक्षा भी निहित थी। उनका दार्शनिक दृष्टिकोण यह था कि जब तक समाज में समानता नहीं होगी, तब तक कोई भी व्यक्ति पूर्ण आध्यात्मिक शांति प्राप्त नहीं कर सकता। यह दृष्टिकोण आज के समय में विशेष रूप से प्रासंगिक है, जब हम सामाजिक असमानता, जातिवाद, और भेदभाव जैसे मुद्दों से संघर्ष कर रहे हैं। रविदासिया दर्शन इस संघर्ष में एक वैचारिक मार्गदर्शन प्रदान करता है।

इस शोध-पत्र का उद्देश्य रविदासिया सम्प्रदाय के इसी दार्शनिक पहलू की गहनता से समीक्षा करना है। यह अध्ययन संत रविदास के विचारों, उनके द्वारा प्रतिपादित आध्यात्मिक मार्ग, आत्मा और परमात्मा की अवधारणा, और भक्ति के स्वरूप को समझने का प्रयास करेगा। साथ ही यह भी विश्लेषण किया जाएगा कि यह दर्शन किस प्रकार सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा की अवधारणाओं से संबद्ध होता है।

रविदासिया सम्प्रदाय का दार्शनिक अध्ययन हमें न केवल संत रविदास की शिक्षाओं को समझने में सहायता करता है, बल्कि यह भी दिखाता है कि कैसे एक धार्मिक आंदोलन सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बन सकता है। यह दर्शन एक समतावादी समाज की कल्पना करता है जिसमें ईश्वर की प्राप्ति किसी विशेष वर्ग की सुविधा नहीं, बल्कि सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध है। इस प्रकार, रविदासिया सम्प्रदाय का अध्ययन भारतीय सामाजिक और दार्शनिक परंपरा की समकालीन प्रासंगिकता को उजागर करता है।

2. रविदासिया सम्प्रदाय की उत्पत्ति और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

रविदासिया सम्प्रदाय की उत्पत्ति और विकास भारतीय धार्मिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक परिदृश्य में एक विशिष्ट घटना के रूप में देखा जाता है। यह धर्म संत रविदास की शिक्षाओं पर आधारित है, जिनकी विचारधारा ने न केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में बल्कि सामाजिक समानता और दलित चेतना के क्षेत्र में भी व्यापक प्रभाव डाला। 15वीं शताब्दी के उत्तर भारत में उभरे इस आंदोलन की ऐतिहासिक जड़ें मध्यकालीन भक्ति आंदोलन, जातिवादी समाज व्यवस्था, और उत्तर भारत के सामाजिक-धार्मिक संघर्षों में गहराई से जुड़ी हैं (Lorenzen, 1995)। इस खंड में हम रविदासिया सम्प्रदाय की उत्पत्ति, उसके ऐतिहासिक संदर्भ, और धीरे-धीरे एक संगठित धार्मिक पहचान बनने की प्रक्रिया का विस्तृत विश्लेषण करेंगे।

2.1 संत रविदास: व्यक्तित्व और प्रेरणा का स्रोत

संत रविदास (लगभग 1450–1520 ई.) उत्तर भारत के वाराणसी में जन्मे एक महान भक्ति संत थे। उनका जन्म चर्मकार जाति में हुआ था, जिसे तत्कालीन समाज में 'अवर्ण' और 'अस्पृश्य' माना जाता था। रविदास का जीवन, उनके कार्य, और उनके भजन समाज के निम्नवर्गीय समुदायों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गए। उन्होंने ईश्वर की भक्ति, मानव समानता, और जातिवाद के उन्मूलन की बात की।

रविदास ने धार्मिक कर्मकांडों, जाति-आधारित भेदभाव और ब्राह्मणवादी वर्चस्व का विरोध किया और ऐसे समाज की कल्पना की जिसमें सभी लोग समभाव से जी सकें। उनकी यह कल्पना "बेगमपुरा" के रूप में प्रसिद्ध

हुई—a utopian vision of a caste-free, egalitarian city (Hawley & Juergensmeyer, 1988)। यह विचार आगे चलकर रविदासिया सम्प्रदाय के आधारभूत सिद्धांतों में समाहित हुआ।

2.2 भक्ति आंदोलन और दलित चेतना

रविदास की शिक्षाएं भक्ति आंदोलन की उत्तर भारतीय शाखा का हिस्सा थीं, जो 14वीं से 17वीं सदी के बीच सामाजिक परिवर्तन की एक लहर के रूप में उभरी। इस आंदोलन ने धर्म को एक व्यक्तिगत अनुभव के रूप में प्रस्तुत किया, जहाँ जाति या कर्मकांड के बजाय भक्ति और प्रेम को सर्वोपरि माना गया। रविदास का स्थान कबीर, नामदेव, और मीराबाई जैसे अन्य भक्ति संतों के साथ देखा जाता है।

हालाँकि भक्ति आंदोलन मुख्यतः आध्यात्मिक मुक्ति की बात करता था, संत रविदास की विशेषता यह थी कि उन्होंने सामाजिक मुक्ति को भी उतनी ही प्राथमिकता दी। उन्होंने न केवल ईश्वर की भक्ति की बात की, बल्कि दलित वर्ग के सामाजिक उत्थान को भी अपनी शिक्षाओं का केंद्र बनाया (Zelliot, 2005)। इसी कारणवश, उनकी परंपरा आगे चलकर न केवल एक धार्मिक धारा बल्कि एक सामाजिक आंदोलन के रूप में भी विकसित हुई।

2.3 संत रविदास की शिक्षाएं और उनकी सामाजिक स्वीकृति

रविदास की रचनाएँ मुख्यतः लोकभाषा में थीं—ब्रज, अवधी, और पंजाबी जैसी भाषाओं में। उनकी वाणी सहज, मार्मिक और गहन दार्शनिक थी। उनकी कई रचनाएँ *गुरु ग्रंथ साहिब* में भी संकलित की गई हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि सिख धर्म के संस्थापकों ने भी रविदास की शिक्षाओं को मान्यता दी (Singh, 2011)। यह धार्मिक स्वीकृति रविदासिया अनुयायियों के लिए सम्मान और प्रेरणा का स्रोत बनी।

उनकी प्रसिद्ध रचना “मन चंगा तो कठौती में गंगा” यह दर्शाती है कि ईश्वर का अनुभव बाह्य स्थानों में नहीं, बल्कि आंतरिक शुद्धता में है। यह विचार एक क्रांतिकारी चुनौती था उन सामाजिक परंपराओं के लिए जो तीर्थयात्रा और बाह्य कर्मकांडों को ही मुक्ति का माध्यम मानती थीं।

2.4 रविदासिया परंपरा का विकास: अनुयायियों से पंथ तक

संत रविदास की मृत्यु के बाद भी उनकी शिक्षाएं उनके अनुयायियों के माध्यम से जीवित रहीं। विशेष रूप से पंजाब और उत्तर भारत के दलित समुदायों ने उन्हें गुरु रूप में स्वीकार किया और उनकी वाणी को जीवन का मार्गदर्शन माना। 20वीं सदी के मध्य तक रविदासिया परंपरा ने एक धार्मिक समुदाय का रूप लेना प्रारंभ कर दिया, जिसमें संत रविदास के मंदिर, भजन-संकीर्तन, और सामाजिक संगठनों की स्थापना की जाने लगी (Juergensmeyer, 1988)।

पंजाब में विशेषतः रविदासिया अनुयायियों ने *डेर* पद्धति को अपनाया—धार्मिक केन्द्र जहाँ रविदास के उपदेशों पर आधारित प्रवचन, लंगर, और सामाजिक सेवा होती थी। यह परंपरा प्रवासी भारतीयों में भी लोकप्रिय हुई और आज कनाडा, ब्रिटेन, अमेरिका आदि में कई रविदासिया मंदिर सक्रिय हैं।

2.5 2010: एक स्वतंत्र धार्मिक पहचान की घोषणा

रविदासिया सम्प्रदाय के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ वर्ष 2010 में आया, जब *गुरु रविदास मंदिर, विअना (ऑस्ट्रिया)* में हुए हमले के बाद, समुदाय ने सिख धर्म से अलग होकर स्वयं को एक स्वतंत्र धर्म के रूप में स्थापित

करने की घोषणा की। यह निर्णय न केवल धार्मिक बल्कि सामाजिक पहचान से भी जुड़ा था। उन्होंने "अमर ग्रंथ" (जिसमें केवल संत रविदास की वाणियाँ हैं) को अपना धर्मग्रंथ घोषित किया और "हरि" या "रविदास" को एकमात्र पूज्य ईश्वर स्वीकार किया (Ram, 2010)।

इस निर्णय ने रविदासिया सम्प्रदाय को एक सुसंगठित धार्मिक संरचना प्रदान की, जिसमें अपने धार्मिक प्रतीक, धार्मिक अनुष्ठान, और सामाजिक-सांस्कृतिक नियम बनाए गए।

2.6 प्रतीक और संस्थान

रविदासिया सम्प्रदाय में कुछ प्रमुख प्रतीक हैं:

- **हरि झंडा:** जो पीले और नीले रंग का होता है और ईश्वर हरि को समर्पित है।
- **अमर ग्रंथ:** केवल संत रविदास की वाणियों का संकलन, जिसे अब गुरु ग्रंथ के रूप में पूजा जाता है।
- **हरि मंदिर और गुरु रविदास जनमस्थान मंदिर (वाराणसी):** समुदाय के प्रमुख धार्मिक स्थल हैं।

इन प्रतीकों और संस्थानों ने रविदासिया सम्प्रदाय को संगठित रूप देने में निर्णायक भूमिका निभाई।

रविदासिया सम्प्रदाय की उत्पत्ति और विकास एक सामाजिक चेतना से प्रेरित धार्मिक आंदोलन का प्रतिनिधित्व करता है। संत रविदास की शिक्षाओं ने न केवल धार्मिक भक्ति को नया स्वरूप दिया, बल्कि दलित समाज को आत्म-सम्मान और स्वतंत्र पहचान का अधिकार भी प्रदान किया। 15वीं शताब्दी में प्रारंभ यह विचार, 21वीं शताब्दी तक एक संगठित धर्म बन चुका है, जिसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि सामाजिक न्याय, आध्यात्मिक अनुभव, और सांस्कृतिक संघर्षों से समृद्ध है। इस दृष्टिकोण से रविदासिया सम्प्रदाय भारतीय समाज में धर्म और समाज के अंतःसंबंध का एक जीवंत उदाहरण है।

3. दार्शनिक सिद्धांत

रविदासिया सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धांत संत रविदास की शिक्षाओं पर आधारित हैं, जो भक्ति आंदोलन की सबसे प्रभावशाली और क्रांतिकारी विचारधाराओं में से एक रहे हैं। इन सिद्धांतों का मूल उद्देश्य आध्यात्मिक मुक्ति को सुलभ बनाना और सामाजिक विषमता को मिटाना रहा है। रविदासिया दर्शन मुख्यतः तीन प्रमुख स्तंभों पर आधारित है: आत्मा और ईश्वर का संबंध, भक्ति का स्वरूप, और सामाजिक न्याय। इन तीनों सिद्धांतों को संत रविदास ने अपने पदों और विचारों के माध्यम से व्यापक रूप से स्पष्ट किया।

3.1 आत्मा और ईश्वर का संबंध

संत रविदास की शिक्षाओं में आत्मा और परमात्मा के बीच अटूट संबंध पर विशेष बल दिया गया है। उनके अनुसार, आत्मा स्वयं ईश्वर का अंश है और भौतिक जगत में उसका अलगाव केवल अज्ञान (अविद्या) के कारण है। इस अज्ञान को केवल सत्संग, आत्मचिंतन, और भक्ति के माध्यम से समाप्त किया जा सकता है।

रविदास कहते हैं:

“मन चंगा तो कठौती में गंगा”

अर्थात् यदि मन शुद्ध है तो कोई भी स्थान पवित्र हो सकता है।

यह पंक्ति इस दर्शन को स्पष्ट करती है कि ईश्वर कहीं बाहर नहीं, बल्कि आत्मा में ही विद्यमान है (Hawley & Juergensmeyer, 1988)। यह विचार अद्वैत वेदांत की उस धारणा से मेल खाता है, जिसमें आत्मा और ब्रह्म को अभिन्न माना गया है।

दर्शन की दृष्टि से, रविदास का यह विचार भौतिकता के परित्याग और आत्मा की ईश्वरीय प्रकृति को पहचानने की ओर संकेत करता है। उन्होंने कहा:

“ऐसा चाहूँ राज मैं, जहाँ मिले सबन को अन्ना।
छोट-बड़ो सब सम बसे, रैदास रहे प्रसन्ना॥”

(Lorenzen, 1995)

इससे स्पष्ट होता है कि वे आत्मा की शुद्धता और उसके सार्वभौमिक स्वरूप को समाज के हर वर्ग में समान रूप से देखना चाहते थे।

3.2 भक्ति का स्वरूप

रविदासिया सम्प्रदाय में भक्ति को मोक्ष का एकमात्र मार्ग माना गया है। यह भक्ति व्यक्तिगत, भावनात्मक और ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण की अवस्था है। रविदास की भक्ति निराकार और निरगुण ईश्वर के प्रति थी, जिसका कोई रूप या आकार नहीं है। यह निरगुण भक्ति परंपरा कबीर, दादू और नामदेव जैसे अन्य संतों से जुड़ी है, लेकिन रविदास ने इसे दलित चेतना और सामाजिक मुक्ति से जोड़ा।

रविदास की भक्ति कर्मकांडों और जातिगत परंपराओं का विरोध करती है। वे कहते हैं:

“जात-पात के फेर में, ऊँच-नीच के भेद।
रैदास मनुष न बन्धता, जब जानै एकै भेद॥”

(Vaudeville, 1974)

इसका अर्थ है कि जब व्यक्ति सभी में एक ही आत्मा को देखता है, तब वह जात-पात और भेदभाव से मुक्त हो जाता है।

भक्ति, रविदास के अनुसार, केवल एक धार्मिक क्रिया नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आत्मिक जागरूकता का माध्यम भी है। इसमें व्यक्ति अपने भीतर की शुद्धता पर ध्यान देता है और ईश्वर से प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करता है। संत रविदास ने सामाजिक सेवा को भी भक्ति का अंग माना। उन्होंने कहा कि जो दूसरों के दुःख को दूर करता है, वही सच्चा भक्त है (Juergensmeyer, 1988)।

इस संदर्भ में भक्ति केवल आध्यात्मिक अभ्यास नहीं है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन की चाबी है। भक्ति के माध्यम से संत रविदास ने आत्मा की स्वतंत्रता, आत्म-सम्मान, और आत्म-गौरव का संदेश दिया।

3.3 सामाजिक न्याय और समानता

रविदासिया दर्शन का सबसे क्रांतिकारी पहलू इसका **सामाजिक न्याय** के प्रति समर्पण है। रविदास का मानना था कि जब तक समाज में ऊँच-नीच और जातिगत भेदभाव रहेगा, तब तक सच्ची भक्ति और मोक्ष संभव नहीं है। इसलिए उन्होंने समानता को न केवल आध्यात्मिक, बल्कि सामाजिक आवश्यकता के रूप में प्रस्तुत किया।

रविदास ने एक ऐसे समाज की कल्पना की जहाँ न कोई ऊँचा है, न नीचा। उनका “बेगमपुरा” का स्वप्न इसी दर्शन का प्रतीक है:

“बेगमपुरा सहर को नाउ, दुखु अन्दोहु नाहिं तिहि ठाउँ
न तसबीस खिराजु न माली, खउफु न खता न तरस जवालि॥”

(Singh, 2011)

यह काल्पनिक नगर एक आदर्श समाज का प्रतीक है, जहाँ कोई कर, डर, दुख या अन्याय नहीं है। यह विचार उनके सामाजिक दर्शन को सूचित करता है, जो समता और स्वतंत्रता पर आधारित है।

यह दृष्टिकोण आज के सामाजिक न्याय आंदोलनों के लिए भी प्रासंगिक है। रविदास के विचारों को बाबासाहेब अंबेडकर और दलित आंदोलन ने गहराई से अपनाया। अंबेडकर के विचारों में रविदास की सामाजिक समता की छवि स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है (Zelliot, 2005)।

आज भी रविदासिया सम्प्रदाय का अस्तित्व एक सामाजिक पहचान और आत्म-सम्मान का प्रतीक है। यह दर्शन न केवल धार्मिक स्वतंत्रता का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि दलित समुदायों की सामाजिक मुक्ति का भी दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है (Ram, 2010)।

3.4 समन्वयात्मक दृष्टिकोण

रविदासिया दर्शन हिन्दू, सिख और संत परंपराओं के बीच एक सेतु का कार्य करता है। इसमें उपनिषदों का आत्म-ब्रह्म विचार, बौद्ध करुणा का तत्त्व, और सिख धर्म की संगत-प्रवृत्ति समाहित है। यह दर्शन समन्वय और स्वीकार्यता की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है।

वर्तमान में यह दर्शन भारत ही नहीं, बल्कि ब्रिटेन, कनाडा और अमेरिका जैसे देशों में प्रवासी भारतीयों के बीच भी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पहचान का प्रमुख स्रोत बन गया है (Juergensmeyer, 1988)।

रविदासिया सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धांत केवल अध्यात्म तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक चेतना और न्याय के सशक्त उपकरण हैं। आत्मा की ईश्वर से एकता, भक्ति की सामाजिक भागीदारी और न्याय की सार्वभौमिकता इस धर्म को विशेष बनाते हैं। संत रविदास का दर्शन आज के वैश्विक समाज में भी एक समतावादी और समरसता-आधारित जीवन की प्रेरणा देता है।

4. समकालीन संदर्भ और पहचान

रविदासिया सम्प्रदाय की समकालीन पहचान और इसकी सामाजिक भूमिका 21वीं सदी में एक नए रूप में उभर कर सामने आई है। जहाँ यह परंपरा संत रविदास की भक्ति-आधारित शिक्षाओं से आरंभ हुई थी, वहीं आज यह एक सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन का स्वरूप धारण कर चुकी है। आधुनिक युग में रविदासिया सम्प्रदाय न केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन का स्रोत है, बल्कि दलित समुदाय की सामाजिक मुक्ति और पहचान की लड़ाई का एक प्रमुख साधन बन चुका है (Ram, 2010)। यह अनुभाग विशेष रूप से इस बात की विवेचना करता है कि किस प्रकार रविदासिया सम्प्रदाय ने समकालीन भारत और प्रवासी भारतीय समाज में अपने दर्शन, संस्थागत ढांचे, ग्रंथों और आंदोलनात्मक पहचान के माध्यम से अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी है।

4.1 धर्म की संस्थागत पहचान

2009 में विख्यात संत श्री गुरु रविदास जी के अनुयायियों द्वारा *रविदासिया सम्प्रदाय* को एक स्वतंत्र धार्मिक पहचान देने की मांग तीव्र हो गई थी, विशेषकर जब 2009 में वियना (ऑस्ट्रिया) में गुरु रविदास मंदिर के प्रमुख संत, श्री निरंजन दास और संत रामानंद पर एक घातक हमला हुआ था (Juergensmeyer, 2011)। इस हमले ने न केवल रविदासिया समुदाय को झकझोर दिया, बल्कि उन्होंने धार्मिक रूप से अपने लिए अलग पंथ और संस्थागत ढांचा स्थापित करने का संकल्प लिया। इसके परिणामस्वरूप 2010 में *अमर ग्रंथ* को रविदासिया सम्प्रदाय का आधिकारिक धार्मिक ग्रंथ घोषित किया गया, जिसे गुरु रविदास के 140 भक्ति पदों और शिक्षाओं पर आधारित बनाया गया (Ram, 2010)।

यह घटनाक्रम इस बात को दर्शाता है कि समकालीन संदर्भ में रविदासिया सम्प्रदाय केवल संत परंपरा का पालन नहीं करता, बल्कि वह अपनी धार्मिक और सांस्कृतिक स्वायत्तता को भी औपचारिक रूप से स्वीकार कर चुका है।

4.2 अमर ग्रंथ और धार्मिक ग्रंथीय स्वायत्तता

गुरु ग्रंथ साहिब से अलग होकर *अमर ग्रंथ* की स्थापना इस बात का प्रतीक है कि रविदासिया समुदाय अब अपने धार्मिक स्वरूप को पूर्ण स्वतंत्रता के साथ जी रहा है। अमर ग्रंथ केवल एक धार्मिक पाठ नहीं है, बल्कि यह सामाजिक आत्म-सम्मान, पहचान और आध्यात्मिक स्वरूप का पुनर्निर्माण भी है (Juergensmeyer, 2011)। इसमें केवल संत रविदास की वाणी शामिल की गई है, जिससे यह एक स्पष्ट धर्म के रूप में प्रस्तुत होता है। भाषाई दृष्टि से भी यह ग्रंथ पंजाबी, हिंदी, और ब्रजभाषा जैसी भाषाओं के संगम को दर्शाता है, जिससे यह भारत के विभिन्न भागों में बसे अनुसूचित जाति समुदायों के लिए सुलभ बनता है (Singh, 2011)। इस ग्रंथ के माध्यम से रविदासिया सम्प्रदाय ने अपने अनुयायियों को एक केंद्रित और विशिष्ट धार्मिक स्रोत प्रदान किया है।

4.3 मंदिर, उत्सव और धार्मिक संस्थाएं

समकालीन युग में रविदासिया सम्प्रदाय ने अपने धार्मिक जीवन को केंद्रित करने के लिए मंदिरों और आश्रमों की स्थापना को प्राथमिकता दी है। पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में हजारों की संख्या में गुरु रविदास मंदिर स्थापित हैं। विदेशों में भी—विशेषकर ब्रिटेन, कनाडा और अमेरिका में—रविदासिया मंदिर न केवल धार्मिक स्थल हैं, बल्कि समुदाय के संगठन, शिक्षा और सामाजिक सहयोग के भी केंद्र बन चुके हैं (Zelliot, 2005)।

हर वर्ष *गुरु रविदास जयंती* का आयोजन बड़े स्तर पर होता है। वाराणसी स्थित *सीर गोवर्धनपुर मंदिर* को संत रविदास की जन्मस्थली माना जाता है, जहाँ लाखों श्रद्धालु एकत्र होकर भक्ति, संगत और सामूहिक भजन में भाग लेते हैं। यह उत्सव न केवल धार्मिक भावना का प्रदर्शन है, बल्कि यह दलित समुदाय की एकजुटता और सामाजिक उपस्थिति का भी प्रतीक बन चुका है (Ram, 2010)।

4.4 दलित चेतना और राजनीतिक भूमिका

रविदासिया सम्प्रदाय की समकालीन पहचान केवल धार्मिक नहीं रही, बल्कि यह अब एक राजनीतिक और सामाजिक आंदोलन का भी स्वरूप ग्रहण कर चुका है। इस धर्म के अनुयायी आमतौर पर अनुसूचित जातियों से आते हैं, जिनके सामाजिक अनुभवों में ऐतिहासिक रूप से उत्पीड़न और भेदभाव रहा है। संत रविदास की शिक्षाएं,

जो समानता, अहिंसा और करुणा पर आधारित हैं, उनके लिए आत्म-सशक्तिकरण का स्रोत बन चुकी हैं (Guru, 2009)।

भारत के कई राज्यों में रविदासिया समुदाय ने राजनीतिक पहचान भी निर्मित की है। उत्तर प्रदेश और पंजाब में कई राजनीतिक दलों ने रविदासिया वोट बैंक को साधने के लिए विशेष रणनीतियाँ अपनाई हैं। रविदासिया सम्प्रदाय के संगठन, जैसे *Dera Sachkhand Ballan* अब केवल धार्मिक संस्था नहीं हैं, बल्कि सामाजिक सुधार, शिक्षा, और न्याय के लिए भी सक्रिय भूमिका निभाते हैं (Juergensmeyer, 2011)।

4.5 प्रवासी पहचान और वैश्विक प्रसार

रविदासिया सम्प्रदाय की समकालीन पहचान अब केवल भारत तक सीमित नहीं रही। ब्रिटेन, कनाडा, अमेरिका और जर्मनी जैसे देशों में बसे प्रवासी रविदासिया समुदाय ने इस धर्म को वैश्विक मंच पर स्थापित किया है। ब्रिटेन में *Guru Ravidass Sabha UK* और कनाडा में *Guru Ravidass Community Centres* जैसे संगठन न केवल धार्मिक सेवाएं देते हैं, बल्कि प्रवासी युवाओं को अपनी जड़ों से जोड़ने का कार्य भी करते हैं (Juergensmeyer, 2011; Ram, 2010)।

इन केंद्रों में रविदासिया इतिहास, भाषा (पंजाबी/हिंदी), संगीत, और सामाजिक कार्यों की शिक्षा दी जाती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि यह धर्म समकालीन विश्व में न केवल जीवित है, बल्कि सशक्त रूप से विकसित भी हो रहा है।

4.6 चुनौती और आलोचना

समकालीन संदर्भ में रविदासिया सम्प्रदाय को कुछ चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है, जिनमें सबसे बड़ी है इसकी पहचान की स्वीकृति। कई बार इसे सिख धर्म का एक उप-समुदाय मान लिया जाता है, जिससे रविदासिया समुदाय की स्वतंत्रता और आत्मसम्मान को आघात पहुँचता है (Singh, 2011)। इसके अलावा जाति आधारित भेदभाव आज भी भारतीय समाज में गहराई से व्याप्त है, जिससे रविदासिया सम्प्रदाय के सिद्धांतों की प्रासंगिकता और भी महत्वपूर्ण हो जाती है।

रविदासिया सम्प्रदाय की समकालीन पहचान केवल एक धार्मिक आंदोलन नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, आत्म-सम्मान और सांस्कृतिक पुनरुत्थान का प्रतीक बन चुकी है। अमर ग्रंथ, मंदिर, वार्षिक उत्सव और अंतरराष्ट्रीय संगठनों के माध्यम से यह धर्म अपने अनुयायियों को सामाजिक प्रेरणा और आध्यात्मिक दिशा दोनों प्रदान करता है। यह स्पष्ट है कि रविदासिया सम्प्रदाय आज के समय में सामाजिक चेतना और आत्मबोध का एक प्रबल माध्यम है, जो भारत और विश्व दोनों स्तरों पर अपनी विशिष्टता बनाए हुए है।

5. निष्कर्ष

रविदासिया सम्प्रदाय का दार्शनिक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि यह परंपरा केवल एक धार्मिक विश्वास प्रणाली नहीं है, बल्कि एक गहन सामाजिक और दार्शनिक आंदोलन भी है। इसकी नींव संत रविदास की शिक्षाओं पर आधारित है, जिनमें मानवता, समानता, आत्मा की शुद्धता, और भक्ति के माध्यम से मुक्ति की अवधारणाएं मुख्य रूप से प्रस्तुत की गई हैं। संत रविदास ने ऐसे समय में सामाजिक क्रांति की नींव रखी जब भारतीय समाज

जातिवादी शृंखलाओं में जकड़ा हुआ था। उनके विचारों ने निम्नवर्गीय समुदायों को आत्मगौरव, पहचान और ईश्वर के साथ सीधा संबंध स्थापित करने की प्रेरणा दी (Lorenzen, 1995)।

दार्शनिक दृष्टिकोण से रविदासिया सम्प्रदाय अद्वैतवाद, निर्गुण भक्ति, और नैतिक आध्यात्मिकता के अद्भुत समन्वय का प्रतीक है। यह धर्म उपनिषदों की उस धारणा को अपनाता है कि आत्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं है, परंतु यह इस विचारधारा को जन-सामान्य के जीवन से जोड़ने का कार्य भी करता है (Hawley & Juergensmeyer, 1988)। इसका उद्देश्य केवल आध्यात्मिक मुक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक मुक्ति भी है। यही कारण है कि रविदासिया पंथ विशेष रूप से दलित और वंचित समुदायों के बीच लोकप्रिय हुआ।

रविदासिया सम्प्रदाय में संत रविदास के भक्ति मार्ग को न केवल ईश्वर के प्रति प्रेम के रूप में देखा गया है, बल्कि यह एक नैतिक और सामाजिक क्रांति के उपकरण के रूप में भी प्रस्तुत होता है। रविदास की उक्तियाँ जैसे “मन चंगा तो कठौती में गंगा” इस बात को दर्शाती हैं कि अंतःकरण की पवित्रता ही वास्तविक भक्ति है। यह विचार न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि नैतिक जीवन के दृष्टिकोण से भी अत्यंत गहन और उपयोगी है (Vaudeville, 1974)।

समाज में व्याप्त ऊँच-नीच और जातिगत भेदभाव को समाप्त करने के लिए रविदासिया दर्शन एक वैचारिक शस्त्र के रूप में सामने आया है। संत रविदास का संदेश यह है कि सभी मनुष्य ईश्वर की रचना हैं और उनमें कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए। यह विचारधारा अंबेडकरवादी मानवतावाद से भी साम्यता रखती है, जहाँ सामाजिक न्याय को धर्म का मूल तत्त्व माना जाता है (Zelliot, 2005)। यही कारण है कि 2010 में रविदासिया समुदाय ने स्वयं को एक अलग धार्मिक पहचान दी और *अमर ग्रंथ* को अपना आधिकारिक ग्रंथ घोषित किया (Ram, 2010)।

आज के परिप्रेक्ष्य में, रविदासिया सम्प्रदाय एक सक्रिय सामाजिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। यह धर्म न केवल आध्यात्मिक शांति देता है, बल्कि आत्म-सम्मान और गरिमा के साथ जीवन जीने की प्रेरणा भी प्रदान करता है। इसमें सामाजिक समानता, आर्थिक न्याय और सांस्कृतिक स्वाभिमान का संगठित दर्शन समाहित है। इस प्रकार रविदासिया सम्प्रदाय का दर्शन भारत के बहुलतावादी समाज में सामाजिक परिवर्तन, धार्मिक समरसता और मानवीय करुणा की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है।

इसलिए, रविदासिया सम्प्रदाय न केवल भक्ति की एक शाखा है, बल्कि यह एक समग्र वैचारिक और दार्शनिक आंदोलन है, जो मानवता की सर्वोच्चता, सामाजिक न्याय, और आत्मज्ञान पर आधारित है। इसकी प्रासंगिकता केवल ऐतिहासिक नहीं है, बल्कि आज के समकालीन सामाजिक संघर्षों में भी इसकी आवाज़ उतनी ही ज़रूरी और सशक्त है।

संदर्भ

- अमृतबाणी गुरु रविदास जी
- डॉ. धर्मवीर – *संत रविदास और दलित चेतना*
- जोगिंदर रावत – *रविदासिया आंदोलन का समाजशास्त्र*
- Guru, G. (2009). *Humiliation: Claims and Context*. Oxford University Press.

- Hawley, J. S., & Juergensmeyer, M. (1988). *Songs of the Saints of India*. Oxford University Press.
- Juergensmeyer, M. (1988). *Radhasoami Reality: The Logic of a Modern Faith*. Princeton University Press.
- Juergensmeyer, M. (2011). *Radhasoami Reality: The Logic of a Modern Faith*. Princeton University Press.
- Lorenzen, D. N. (1995). *Bhakti Religion in North India: Community Identity and Political Action*. State University of New York Press.
- Ram, R. (2010). "Ravidassia Dharm: Identity, Marginalisation and Emancipation." *Economic and Political Weekly*, 45(18), 64–70.
- Singh, P. (2011). *The Guru in Sikhism: Structure, Function and Authority*. Oxford University Press.
- Vaudeville, C. (1974). *Kabir*. Oxford University Press.
- Zelliot, E. (2005). *From Untouchable to Dalit: Essays on the Ambedkar Movement*. Manohar Publishers.